क्षेत्र में कार्यशील महिलाओं को सामाजिक आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। बिना वित्त आपके कितनी भी योग्यता रखे, आप में कोई मूल्य नहीं है, आधुनिक समय में लोग पैसा को ही सब कुछ मानते है।

खास–तौर पर ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों पर काफी समस्या की स्थिति देखने को मिलती है। बिना पैसे के लोगों को दो वक्त की रोटी भी नसीब नहीं होती है। इस प्रकार समस्या से लड़ने के लिए मेहनत जरूरी है।

बच्चों के पालन–पोषण की समस्या :– असंगठित क्षेत्र में कार्यशील महिलाओं के सामने बच्चों के पालन–पोषण की समस्या बहुत ही महत्वपूर्ण समस्या होती है। पेशेवर जीवन में आगे बढ़ने की राह में महिलाओं के सामने तब बड़ी समस्या आती है, जब उन्हें अपनी कामकाजी भूमिका के साथ–साथ मातृत्व का दायित्व भी निभाना पड़ता है। कुदरत ने उन्हें माँ के रूप में जो खास जिम्मेदारी सौंपी हे, उसे पूरा करने के लिए अक्सर महिलाओं को अपनी सामाजिक जिंदगी की कुर्बानी देनी पड़ती है। उनका मानना है कि अपने कार्य के साथ, पारिवारिक एवं सामाजिक, दायित्वों का निर्वाह उनकी नैतिक जिम्मेदारी है, इसमें बच्चों के बीमार होने पर उनकी देखभाल उनका दायित्व है व इसका निर्वाह वे खुशी से करती है और वे बच्चों की पढ़ाई के प्रति सजग है, वे अपनी इस जिम्मेदारी को बखुबी पूरा भी करती है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. World Bank Report: 6 April 2009, Hindustan Times New Delhi Comparative study of Working Women P-11.
2. Pappola T.S. (1982): Woman works in an urban Labour Market: A study of Segeration and discrimation in employment Lucknow Publication P-116.
3. Shardamani. K (1985): Progressive Land Legislation and subordination of woman, Criterian Publication, New Delhi P-163
4. Kapoor Pramila (1968): The Study of Martial Adjustment of educated working women in India, Agra Publication.
5. Desai Neera (1975): Women in Morden India, Bora Publication Mumbai P- 253.
6. Dube L. & Patriwala. R (1990): Structural and strategies: Women work and family Sage New Delhi Publication.
7. Mather Deepa (1992): Women, Family and Work, Rawat Publication, Jaipur.
8. Srivastave Sudhir Kumar (1985):Women Empowerment: Mcgraw Hill Publication, New Delhi

*****

प्राचीन काल के प्रमुख सांगितिक ग्रंथों में संगीत

नमिता कुमारी*

भारत में संगीत कला अराधना प्रागैतिहासिक काल से आज तक चली आ रही है। वैदिक काल में संगीत का शैशव काल था, परंतु संगीत के आधारभूत नियमों को वैदिक काल में ऋषियों ने खोज निकाला था। पुराणों के काल में हमारा संगीत किशोरावस्था में पहुँच गया। संगीत एक स्वतंत्र शास्त्र बन गया । वाल्मीकि रामायण, महाभारत के काल तक हमारे संगीत का पर्याप्त विकास हो चुका था किन्तु उस विकसित संगीत का कोई भी शास्त्र उपलब्ध नहीं होता। गान्धर्व वेद का उल्लेख तो अवश्य मिलता है, किन्तु इसका निर्माण कब हुआ इसका संकेत नहीं मिलता है। प्राचीन समय के भारतीय संगीत का यदि कोई भी शास्त्र उपलब्ध है तो भरत का नाट्यशास्त्र। इसलिए यहाँ सर्वप्रथम नाट्यशास्त्र के विषय में जानना आवश्यक है।

नाट्यशास्त्र :– भारतीय मतानुसार भरत का नाट्यशास्त्र ही वह प्रथम ग्रंथ है,जिसमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण से आकलन के उपरांत उसके शास्त्ररीय पक्ष को प्रस्तुत किया गया है। नाट्यशास्त्र के जनक 'भरतमुनि' को ही स्थान प्राप्त है जिन्हें संगीत का आदिपुरुष कहा गया है। भरत कृत नाट्यशास्त्र भारतीय साहित्य तथा संगीत का विशद भंडार है।

भरतकृत नाट्यशास्त्र को योगशास्त्र अथवा मोक्ष शास्त्र भी कहा जाता है। श्रुतियों के वैज्ञानिक सूक्ष्म विवेचना के कारण यह नाट्यशास्त्र है। नाद एवं नृत्य का संबंध योगशास्त्र से बताने के कारण इसे योगशास्त्र कहा गया है तथा मोक्षशास्त्र इसलिए है कि क्योंकि इसमें मोक्षप्राप्ति के साधन संगीत एवं नृत्यकला का सुंदर संयोग निर्दिष्ट किया गया है। रस, छंद, भाषा, वेशभूषा, अभिनय, संगीत तथा नृत्य सभी विषयों का विवरण नाट्यशास्त्र में उपलब्ध है। इसके अतिरिक्त गायक तथा वादक के गुण–अवगुण की चर्चा भी की गयी है। नाट्यशास्त्र के अनुसार नाट्यकला बहुत प्राचीन काल से सिद्ध है। नाट्यशास्त्र में इस कला को ब्रह्मा से उद्धत माना गया है तथा उसके पुराने अनुयायी भरत बताए गए हैं।

***शोध छात्रा वि0 वि0 संगीत एवं नाट्य विभाग ल0 न0 मि0 वि0 वि0 दरभंगा**

गीते प्रयत्नः प्रथमस्तु कार्यः शय्यांहि नाट्यशास्त्रा वदन्ति गीतम्।
गीतेऽपि वाद्येऽपि च सम्प्रयुक्ते नाट्यप्रयोगो न विपत्ति मेति।।[1]

अर्थात् नाट्य प्रयोक्ता को गीत में ही पहला प्रयत्न करना चाहिए। विज्ञ जन गीत को नाट्य की शय्या कहते हैं। यदि गीत और वाद्य का अच्छी तरह प्रयोग हो तो फिर नाट्य प्रयोग में कोई कठिनाई नहीं उपस्थित होती। इससे यह सिद्ध होता है कि भरत नाटक में गीत और वाद्य का विशेष स्थान मानते हैं। भरत का संगीत गांधर्व संगीत था। गांधर्व संगीत की विशेषताएँ नाट्यशास्त्र के निम्न श्लोकों में इस प्रकार है–

यतु तंत्रीकृतं प्रोक्तं नाना तोद्य समाश्रयम।
गान्धर्वयिति तज्ज्ञेयं स्वरताल पदात्मकम्।।[2]

अर्थात् जिसमें तंत्री और अन्य उपकारक वाद्यों का सहारा हो, जिसमें स्वर ताल और पद का योग हो, वह गान्धर्व है।

अत्यर्थमिष्टं देवानां तथा प्रीताकरं पुनः।
गंधर्वाणां च यस्माद्वि तस्मादगांधर्वमुच्यते।।[3]

अर्थात् जो देवों को इष्ट हो और गान्धर्वों का प्रीतिकार हो वह गान्धर्व है।

अस्ययोनिर्भवेद् गानं वीणा वंशस्तथैव च।
एतषां चैव वक्ष्यामि विधिं स्वर समुत्थितम्।।[4]

अर्थात् इसका मूल गान, वीणा (तत् वाद्य) और बाँसुरी (सुषिर वाद्य) है। इसकी स्वरोत्पन्न विधि मैं बतलाऊँगा।

गान्धर्व त्रिविध विद्यात्स्वरताल पदात्मकम्।
त्रिविधस्यापि वक्ष्यामि लक्षणं कर्म चैव हि।।[5]

अर्थात्–गान्धर्व त्रिविध है, स्वर, ताल और पद। गान्धर्व स्वर, ताल और पद (गीत शब्द) युक्त है।

नाट्यशास्त्र से स्पष्ट है कि नृत्यकला गान्धर्व से विभिन्न एवं स्वतंत्र कला है। नाट्यकला में संगीत का भी बहुत महत्व बताया गया है। इसी प्रकार वादन कला को भी खास महत्त्व इस ग्रंथ में दिया गया है। संगीत के लिए गंधर्वों जिसमें नारद का महत्त्व उल्लेखनीय है। वादन के लिए स्वाति जैसे वाद्य कला निपुणों तथा नृत्य के लिए अप्सराओं की महत्ता बतायी गयी है।।

नाट्यसंग्रह में रस, भाव, अभिनय, धर्मी, वृत्ति, प्रकृति, स्वर, आतोद्य गान तथा रंग विषयक ज्ञान सन्निहित है। इस प्रकार गीत, नृत्य तथा संगीत के ही समान पाठ्य अभिनय आदि अंगों का भी महत्त्व है। नाट्य वेद की रचना वेद तथा उपवेद दोनों के आश्रय से हुई है। अतः भरत का नाट्यशास्त्र नाट्यवेद के नाम से

विभूषित होना सार्थक लगता है। भरत के नाट्य में गान्धर्व वेद को मूलतः अभिन्न माना है, उनमें अंतर है तो केवल बलाघात का।[6]

प्राचीन काल में किसी अनध्याय के दिन 'नाट्यवेद' के ज्ञाता भरत अपने पुत्रों के साथ बैठे हुए थे। तभी आत्रेय आदि प्रबुद्ध मुनियों ने 'नाट्य' से संबंधित अनेकों प्रश्न किए। तब ब्रह्मा जी के द्वारा सीखे हुए नाट्य संबंधी तथ्यों को भरत मुनि ने कहा। यही संवाद 'नाट्यशास्त्र' है।[7]

वृहद्देशी–मतंग मुनि द्वारा रचित ग्रंथ 'वृहद्देशी' हमें खंडित रूप में प्राप्त है। इसके छः अध्याय है। वृहद्देशी के रागध्याय, स्वराध्याय और प्रबंधध्याय ही प्राप्त है। यह ग्रंथ खंडितावस्था में उपलब्ध है परंतु महाराजा कुंभा को इसके अधिकांश भाग प्राप्त थे जिसका उल्लेख उन्होंने अपने ग्रंथ 'संगीतराज' में किया है। इस ग्रंथ के छः अध्याय है[8] –

1. देशी प्रकरण, 2. जाति प्रकरण, 3. राग लक्षण, 4. भाषा लक्षण, 5. देशी राग, तथा 6. प्रबंध।

प्रथम अध्याय की अंतिम पंक्ति तथा विभिन्न उल्लेखों एवं संदर्भो से यह ज्ञात होता है कि सप्तम अध्याय वाद्याध्याय था तथा इस ग्रंथ में ताल और नृत्य विषयक अध्याय भी रहे होंगे, जो अद्यतन अनुपलब्ध है।[9]

मतंग मुनि के समय के विषय में काफी मतभेद है। सिंह भूपाल ने मतंग को नाट्य के रचयिता भरत के चार पुत्रों में से एक बताया है–महामहोपाध्याय पी0बी0 काणे के अनुसार मतंग का काल इसा से 750 वर्ष पूर्व है। प्रो0 रामकृष्ण कवि ने मतंग का काल नवीं शताब्दी माना है। दक्षिणात्य ग्रंथ 'वृहद्देशी' का रचनाकाल पाँचवी शताब्दी माना है।[10]

'वृहद्देशी' की एक विशिष्टता यह भी है कि उसमें द्वादश स्वरमूर्च्छनावाद का उल्लेख है। इसमें संशय नहीं है कि मतंग मुनि भारतवर्ष के सबसे योग्य अनुकरणकर्ता थे। वे भरत के सप्त स्वर मुर्च्छनावाद के विरोधी नहीं है। उन्होंने कहा है–'मैंने सप्त स्वर मुर्च्छनाएँ कह दी। अब द्वादशस्वर मूर्च्छनाएँ कहूँगा। मूर्च्छनाओं को निर्देश तीनों स्थानों की प्राप्ति तथा मंद्रतार की सिद्धि के लिए है।

'वृहद्देशी' को परवर्ती सभी आचार्यो ने आदर की दृष्टि से देखा है। मतंग ने मार्ग संगीत के साथ ही, देशी संगीत का भी वर्णन किया है–

नानाविधेषु देशेषु जतुनां सुखदो भवेत।
ततः प्रभृति लोकानां नद्रेंद्राणां भवृच्छया।।
देशे–देशे प्रवृतोऽसौ ध्वनिर्देशिति संज्ञितः।
मतंगस्य वचः श्रुत्वा नारदो मुनिरब्रवीत।।
ननु ध्वनेस्तु देशीत्वं कथं जातं महामुने।
अमूर्तत्वाच्च तेषां हि इति में वक्तुमर्हसि।।[11]

देशी के बारे में मतंग मुनि का कथन है कि स्त्रियाँ बाल–गोपाल और राजा महाराजा अपनी –अपनी इच्छानुसार अपने–अपने देश में जिसे अनुराग सहित गाते हैं वह 'देशी' है। उपरोक्त तथ्य निम्न श्लोक में निहित है–

अबलाबाले गोपालैः क्षितिपालैर्निजेच्छाया।
गीयते सानुरागेन स्वदेशे देशिरूच्यते।।13।।
निबद्धश्चा निबद्धश्च मार्गेऽयं द्विविधो मतः।।[12]

मतंग ने अपने ग्रंथ में नाद की महिमा बताते समय नृत्य का नाम भी लिया है–

ननादेन बिना नृत तस्मान्नदात्मकं जगत्।
नादरूपः स्मृतो ब्रह्मा नाद रूपा जनार्दन।।[13]
नादरूपा पराशक्तिर्नादिरूपो महेश्वरः।
यदुक्तं ब्रह्मणः स्थानं ब्राह्माग्रंथिश्चं यः स्मृतः।।8।।
तन्मध्ये संस्थितः प्राणः प्रणाद बहियसमुद्गमः।
बह्यिमारूत संयोन्नादः समुपजायते।।9।।
नादादुत्पद्यते बिदुंनीदात् सर्व च वाह्मयम्।।[14]

श्रुति की परिभाषा देते हुए श्रुति के विषय में कहा है कि–मतंग ने प्रचलित पाँच प्रकार की सांगीतिक रचनाओं का वर्णन किया साथ ही अपनी ओर से दो शैलियों का भी उल्लेख किया है–शुद्धा, भिन्ना, गौड़ी बेसरा, साधारणी तथा भाषा और विभाषा।

1. शुद्धा–शुद्धा गिति शैली सम और ललित स्वरों से युक्त संरचना है। इसमें स्वरों का प्रयोग साधारण ढंग से करते हैं परंतु स्वरों का प्रयोग आनंद देने वाला होता है।
2. भिन्ना–भिन्ना शैली वक्र, सुक्ष्म और मधुर गायकों से युक्त संरचना है। इस शैली के गायन में स्वरों में काफी उतार–चढ़ाव करना पड़ता है। इस शैली में वक्र स्वरों से पूर्ण होने के साथ ही स्वर परिवर्तन की प्रक्रिया का ज्ञान होता है।
3. गौड़ी–गौड़ी मन्द्र, मध्य और तार तीनों स्थानों में अखण्ड रूप से कंपित गमकों से पूर्ण मनोहारी सुक्ष्म स्वरों से युक्त संरचना है।
4. बेसरा–चारों ही वर्णों में अत्यंत रंजकता पूर्ण वेगवान स्वरों में उत्पन्न होने वाली गिति शैली है।
5. साधारणी–साधारणी शैली में उपर्युक्त चारों शैलियों की विशेषताएँ सम्मिलित रहती है। सभी शैलियों की मार्दव कोमल और आनंदवर्द्धक अभिव्यक्तियों को इसमें शामिल किया गया है।

वृहद्देशी के समय से ही जाति गायन के स्थान पर राग गायन का सुत्रापात हुआ।

मतंग के मुख्य ग्राम राग 1. टकी 2. सवीरा 3. मालव पंचम 4. षाडव 5. वट्ट राग 6. हिंडोलक और 7. टक्क कौशिका कहे जा सकते हैं। इन्होंने रागों के तीन मुख्य भेद बताएँ हैं–शुद्ध, छायालग और संकीर्ण। मतंग मुनि की जाति के दस लक्षणों को भरत मत के अनुसार माना जाता है। अर्थात् यह बात महत्त्वपूर्ण है कि भरत और मतंग वर्जित जाति के दश लक्षण वर्तमान समय तक मान्य है।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि 'वृहद्देशी' में वर्ण्य विषय 'मतंग–नारद' संवाद है। अध्ययन में यह भी प्रतीत होता है कि उक्त 'मतंग–नारद' संवाद को मतंग के किसी योग्य शिष्य अथवा अन्य विद्वान द्वारा संकलित किया गया है।[15]

नारदीय शिक्षाः–नारदकृत 'नारदीय शिक्षा' वैदिक संगीत से सम्बद्ध एक अद्वितीय ग्रन्थ है।

नारद कृत 'नारदीय शिक्षा' सामवेद का शिक्षा ग्रन्थ है।

'नारदीय शिक्षा' के प्रथम प्रकरण में वेदों में प्रयुक्त स्वरों का वर्णन है। जबकि द्वितीय प्रकरण में गान्धर्व स्वरों का वर्णन है–

''पवित्र पावनं पुण्यं नारदेन प्रकीर्तितम्।''[16]

गान्धार ग्राम के संबंध में नारद ने लिखा है–

''स्वर्गान्नान्यत्र गन्धारो नारदस्य मतंयथा।''[17]

नारदकृत 'नारदीय शिक्षा' एक प्राचीन ग्रंथ है। इसके काल का स्पष्ट उल्लेख अन्यत्र नहीं मिलता है। ठाकुर जयदेव सिंह ने 'नारदीय शिक्षा' को नाट्यशास्त्रा से पूर्ववर्ती ग्रंथ माना है। डॉ0 शरच्चन्द्र श्रीधर परांजपे ने 'नारदीय शिक्षा' को 200–500 ई0 पू0 कहा है। नारद के नाम से तीन ग्रन्थ प्रचलित है–नारदीय शिक्षा, संगीत, मकरंद पंचमसारसंहिता एवं चत्वारिंशत्रागनिरूपणम्। इनमें सबसे अधिक प्राचीन नारदीय शिक्षा है।

शिक्षा ग्रंथों में नारदीय शिक्षा अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। यह सामवेद का शिक्षा ग्रंथ है। सामवेद का केवल सस्वर पाठ नहीं होता था। गान भी होता था। अतः शिक्षा ग्रंथों के समान नारदीय शिक्षा में भी उदात्त अनुदात्त इत्यादि स्वरों का उच्चारण विधि पर तो विचार किया ही गया उसके अतिरिक्त इसमें साम में प्रयुक्त स्वरों के ग्राम, क्रम इत्यादि पर पर्याप्त प्रकाश डाला गया है। आर्चिक, गाथिक, स्वरान्तर, औड़व, षाडव, सम्पूर्ण स्वरों के गान, श्रुतिजाति, गात्रवीणा इत्यादि जो सामगान में प्रयुक्त होते थे–इन सबका विवेचन इसमें मिलता है।

नारदीय शिक्षा के रचना के समय का ठीक–ठीक निर्धारण करना दुष्कर है। इतना अनुमान मात्रा लगाया जा सकता है कि मूल ग्रंथ भरत का पूर्ववर्ती है।

इसमें वैदिक और कुछ लौकिक दोनों गानों का वर्णन है। इसमें जो मूर्च्छना का वर्णन है वह थोड़ा भिन्न है। उसकी भाषा भी कुछ पुरानी ब्राह्मण काल की लगती है। उदाहरण के लिए कारू शब्द को ले जिसका प्रयोग गान्धर्व शब्द की निरूक्त में 1, 4, 12 में व्याख्या की गयी है। कारू का अर्थ अथर्ववेद गान करने वाला या स्तुति करने वाला के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। नारदीय शिक्षा में कलाकार के अर्थ में इस शब्द का प्रयोग पर्याप्त रूप में मिलता है। विषय वर्णन और भाषा की दृष्टि से यह ग्रंथ काफी पुराना है किन्तु कालान्तर में इसमें कुछ विषय भी जोड़े गये हैं।[18]

संगीत मकरंद–संगीत मकरंद नारद द्वारा रचित महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। डॉ0 अरूण कुमार सेन के अनुसार–'नाट्यशास्त्रा तथा संगीत रत्नाकर के मध्य किसी 'संगीत मकरंद' की रचना हुई होगी।''[19] कई विद्वान् 'संगीत मकरन्द' के लेखक नारद को मतंग का वाद का मानते हैं तो कई इसे महाकाव्य काल के बाद की रचना। अंततः इस ग्रन्थ को सातवीं एवं नवीं शताब्दी के बीच का निर्धारित किया जा सकता है।

इस ग्रन्थ में कुल 560 श्लोक है। 'संगीत मकरंद' में मुख्य दो अध्याय हैं–संगीताध्याय एवं नृत्याध्याय। इन दोनों अध्यायों को चार–चार पादों में बाँटा गया है। इसकी भाषा संस्कृत है।

'संगीताध्याय' के प्रथम पाद में सर्वप्रथम नाद का उल्लेख है–

''अनाहतोऽहतश्चैव सनादौ द्विविधोमतः।''

मुख्यतः अनाहत और आहत ये नाद के दो प्रकार हैं। तत् पश्चात् नादोत्पति के आधार स्वरूप पाँच स्थानों के अंतर्गत नखज, वायुज, चर्मज, लौहज एवं शरीरज की व्याख्या की गयी है। नाभि, हृद, कंठ, तालु, नासा, दन्त एवं ओष्ट से क्रमशः षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पंचम, धैवत, निषाद इन सात स्वरों की संज्ञाएँ प्राप्त होती है। इन सप्त स्वरों को मयूर, चातक, अज, क्रौंच, कोकिल, अश्व तथा हाथी से सम्बद्ध बताया है। नारद ने संगीत को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष प्राप्ति का साधन बताया है–

''धर्मार्थ काममोक्षाणांमिदमेव हि साधनम्।।''

इस ग्रन्थ में स्थायी, संचारी, आरोह एवं अवरोह के वर्णन के बाद वादी, सम्वादी, अनुवादी, विवादी का वर्णन किया है। इसके बाद इन्होंने स्वरों के वंश, जाति, वर्ग, द्वीप, ऋषि, देवता, दन्द, गोत्रा, नक्षत्रा, राशि, गण, रस आदि का वर्णन किया है। नृत्याध्याय में मृदंगोत्पत्ति लक्षण, नाट्यशाला, सभा, सभापति तथा श्रोताओं का विश्लेषण किया गया है। सभा के नौ विद्वान–विद्वान, कवि, भाट (गायक), संगीतज्ञ, परिहासक, इतिहासज्ञ, ज्योतिष, वैद्य और पौराणिक के बाद नृत्य से संबंधित वर्णन है।

दत्तिलतम् :–'दत्तिलम्' नामक ग्रन्थ के रचयिता दत्तिल हैं। प्राचीन गंधर्व आचार्यों में दत्तिल का स्थान विशेष रूप से उल्लेखनीय है। दत्तिल भरत के सौ पुत्रों में से एक है, ऐसा नाट्यशास्त्रा के प्रथम अध्याय में कहा गया है।[20]

प्राचीन तमिल साहित्य में 'पंचभारतीय' नामक नाट्य ग्रंथ के अनुसार पाँच भरतों की कल्पना की गई है जिसमें एक दत्तिल भरत भी हैं–

1. वृद्ध भरत
2. भरत
3. कोहल भरत
4. दत्तिल भरत
5. मतंग भरत

'दत्तिलम' में दत्तिल ने अपने आचार्यों का उल्लेख करते हुए नारद के साथ कोहल और विशाखिल के मतों का भी उद्धरण दिया है। इस स्थिति में इन्हें विद्वानों द्वारा 7वीं शताब्दी का माना गया है।

दत्तिल कृत 'दत्तिल कोहिलियम' नामक एक ग्रंथ भी प्राप्त होता है। कई उद्धरणों में दत्तिल कृत 'नृत्तलक्षणम्' का उल्लेख मिलता है।

दत्तिलकृत 'दत्तिलम' उनकी उपलब्ध कृति है। दत्तिलकृत 'दत्तिलम' ग्रंथ संस्कृत भाषा में लिखित संगीत विषयक लघु परंतु महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है। इस ग्रंथ में दो अध्याय है–अध्यायों का 'उद्देश्य' संज्ञा दी गई है–स्वरोद्देश्य तथा तालोद्देश्य। दोनों अध्यायों से पूर्व भी पीठिका में देव गुरु वंदना एवं गंधर्व की विशिष्टताओं का समावेश है। दोनों अध्यायों में अध्याय–नामानुरूप विषयों का प्रतिपादन हुआ है। इस प्रकार इस ग्रंथ के तीन खंड हुए–1. पूर्व पीठिका, 2. स्वरोद्देश्य एवं 3. तालोद्देश्य। पूर्व पीठिका में दत्तिल ने अपने ग्रंथ 'दत्तिलम' का आरंभ मंगल श्लोक से किया है–

''प्रणम्य परमेशानं ब्रह्माद्यांश्च गुरुंस्तथा।
गान्धर्वशास्त्रा संक्षेपः सारतोऽयं मयोच्यते।।''[21]

इस तरह संगीत ग्रंथ कि रचना की दृष्टि से देखा जाए तो शास्त्रीय संगीत के अधिकतम शास्त्रकार प्राचीन एवं मध्यकाल में ही अविर्भूत हुए है। संगीत की अमुल्य कृतियाँ इन्होंने सर्जित की और इन्हीं शास्त्रकारों के योगदान के फलस्वरूप आज का शास्त्रीय संगीत एक ठोस आधार के लिए प्रतिष्ठित हो सका है। आज संगीत के सभी तत्व चाहे वह परिभाषिक शब्द हो चाहे रागों के लक्षण या अन्य नियम या रागों के संबंध में शास्त्रोक्त सभी का समाधान इन ग्रंथों में मिल जाता है।

संदर्भः–

1. भरत, नाट्य शास्त्र, अध्याय–32वाँ, श्लोक–436, बरौदा संस्करण गायकवाड़, ओरियन्टल, सीरिज बरौदा
2. वही, अध्याय–28वाँ, श्लोक–8

3. वही, अध्याय–24वाँ, श्लोक–9
4. वही, अध्याय–28वाँ, श्लोक–10
5. वही, अध्याय–28वाँ, श्लोक–11
6. वर्मा, सिम्मी (डॉ0), प्राचीन एवं मध्यकालीन शास्त्राकारों का संगीत में योगदान, पृ0
7, 'काव्या' लावण्य कीर्ति सिंह (डॉ0), भारतीय संगीत ग्रंथ, पृ0–4, कनिष्क पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्युटर्स, नई दिल्ली–2012
8. वही, पृ0–68
9. वही, पृ0–68
10. वर्मा, सिम्मी (डॉ0), प्राचीन एवं मध्यकाल के शास्त्राकारों का संगीत में योगदान, पृ0
11. वही पृ0– 41
12. वही, पृ0 41,
13. वही, पृ0–41
14. वही, पृ0–41
15. 'काव्या' लावण्य कीर्ति सिंह (डॉ0), भारतीय संगीत ग्रंथ, पृ0–80, कनिष्क पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्युटर्स, नई दिल्ली–2012
16. नारद, नारदीय शिक्षा, द्वितीय प्रकरण, प्रथम श्लोक
17. वही
18. वर्मा, सिम्मी (डॉ0), प्राचीन एवं मध्यकाल के शास्त्राकारों का संगीत में योगदान, पृ
कनिष्क पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्युटर्स, नई दिल्ली–2012
19. सेन, अरुण कुमार (डॉ0), भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन, पृ0–320,
20. काव्या' लावण्य कीर्ति सिंह (डॉ0), भारतीय संगीत ग्रन्थ, पृ0–44–45
21. वही, पृ0–63

नूरजहाँ

डॉ संध्या कुमारी *

मध्यकालीन भारतीय इतिहास में दो महिला शासिका का नाम इतिहास के पन्नों में दर्ज है जिसने अपनी बुद्धिमत्ता कार्यकुशलता एवं क्षमता की छाप छोड़ी है। वह है–रजिया सुल्तान और नूरजहाँ। हम नूरजहाँ के प्रारंभिक जीवन तथा उनकी उपलब्धियों की चर्चा यहाँ करेंगे।

घटना मुगले आजम अकबर के काल की है जब खुरासान के मंत्री ख्वाजा मोहम्मद शरीफ का पुत्र मिर्जा ग्यासबेग तेहरान को त्याग कर भारत अपने दो पुत्रों व एक गर्भवती पत्नी के साथ जीविका की तलाश में आया। कंधार पहुचने पर उसकी पत्नी ने एक पुत्री को जन्म दिया। गरीबी, फटेहाली और विविध समस्याओ से ग्रस्त होने की वजह से वह दम्पति अपने नवजात बच्ची को ले जाने में समर्थ नहीं थे। अतः उसे एक पेड़ के नीचे छोड़कर उन्होने अपने पथ पर पग अग्रसर किये। अभी कुछ दूर ही चल पाये थे कि माता को अपना शिशु–शून्य जीवन एक असाध्य भार ज्ञात पड़ने लगा और उसने अपने पति को उस बच्ची को उठा लाने के लिए लौटा भेजा। शिशु के समक्ष उसने एक चमत्कार का दर्शन किया । एक सर्प कुण्डली बनाए बैठा था और अपने फन से धूप से उसकी रक्षा कर रहा था। ग्यासबेग ने सर्प को दूर करने के लिए शोर मचाना आरंभ किया तथा बच्ची को उठा लिया। अनेक कष्टों का सामना करते हुए वे लाहौर पहूँचे । यहाँ के एक पुराने मित्र ने ग्यासवेग का परिचय अकबर से कराया।'[1]

बादशाह अकबर ने मिर्जा ग्यासवेग को एक सामान्य पद पर नियुक्त कर दिया किन्तु अपनी कार्यकुशलता के बल पर वह शीघ्र शाही महल में महत्वपूर्ण पद पर प्रतिष्ठित हो गया। पुनः वह काबुल का दीवान बना दिया गया। अब उसके दुःख के दिन समाप्त थे। उसकी पुत्री जो रास्ते में जन्म ली थी वह शादी के योग्य हो गयी। उसका नाम उसने मेहरूनिस्सा था। उसकी शादी फारस निवासी शेर अफगान जो अकबर का एक सुयोग्य अधिकारी था से कर दी गयी। वह बादशाह जहाँगीर का एक विश्वास पात्र अधिकारी थाय भिन्न कालान्तर में दोनो के संबंध अत्यंत कटू हो गए।

वास्तविकता यह थी कि मेहरूनिस्सा सुंदरता की प्रतिमूर्ति थी। उसका रूप, सौन्दर्य एवं मोहक व्यक्तित्व जहाँगीर के दिल व दिमाग को छू गया था। जहाँगीर उससे शादी को इच्छुक था और बादशाह अकबर उसका विरोधी। स्वयं मेहरूनिस्सा भी जहाँगीर पर मोहित थी। 1605 ई0 में अकबर की मृत्यु के पश्चात